जिसने उम्मीद के बीज बोए

।। स्वर्गीय श्री जौहरीलाल मित्तल शताब्दी प्रसंग (१८९५-१९९५) ।।

ज्याँ गिओनो की मूल फ्रांसिसी रचना
The Man who planted Trees
पर आधारित

भावानुवाद : अरविन्द गुप्ता
चित्रांकन : दिलीप चिंचालकर
संयोजन : अतुल मित्तल, अरविन्द बड़जात्या
सहयोग : अनुराधा पुणेकर, जीतेन्द्र चौहान

श्री मित्तल जन सेवा निधि
२६, यशवंत निवास मार्ग, इंदौर ४५२००३

*फोटो कंपोजिंग और रंगीन चित्रों की प्रोसेसिंग **नईदुनिया** इंदौर के सौजन्य से।*
मुद्रण : इंदौर पेपर बॉक्स फैक्ट्री

किसी आदमी की इंसानियत का सही अंदाजा लगाने के लिए उसे एक लंबे अर्से तक जाँचना-परखना जरूरी है। अगर कोई फल की इच्छा करे बगैर दूसरों की भलाई में लगा हो तो उससे अच्छा और क्या हो सकता है। जिस इंसान की कहानी मैं आपको सुनाने जा रहा हूँ उसने तो अपनी मेहनत और लगन से इस धरती की तस्वीर ही बदल डाली।

बात दरअसल काफी पुरानी है। आज से करीब चालीस साल पहले मैं फौज़ में भरती हुआ था। साल भर की ट्रेनिंग के बाद मुझे पंद्रह दिन की छुट्टी मिली थी। छुट्टी में घर जाने की बजाए मैंने घुमक्कड़ी की सोची। अपने फौज़ी थैले में कुछ खाने का सामान और पानी की बोतल रखकर मैं सैर को निकल पड़ा। जिस इलाके से मैं गुजर रहा था उसे मैं पहले से नहीं जानता था। जमीन एकदम बंजर थी। कहीं-कहीं पीले धतूरे की कँटीली झाड़ियाँ थीं। बाकी जगह सूखी घास के अलावा और कुछ नहीं उग रहा था।

मुझे अब इस इलाके में चलते-चलते दो दिन हो गए थे। यह इलाका काफी वीरान था और माहौल में भी एक सन्नाटा छाया हुआ था। जहाँ मैं अब खड़ा था वहाँ शायद कभी गाँव रहा होगा। एक झुरमुटे में छह-सात मकान थे जो अब खंडहर में बदल गए थे। इन्हें देखकर मुझे लगा कि आसपास कोई कुआँ या पानी का सोता जरूर होगा। थोड़ा ढूँढने पर एक नाला दिखाई भी दिया। पर वह भी अब सूख गया था। मैंने वहीं पर कुछ देर आराम करने की सोची। मेरा पानी खत्म हो गया था और प्यास से मेरा गला चटख रहा था। गाँव के एक कोने में एक टूटा मंदिर भी दिखाई दिया। पर वहाँ अब कोई नहीं रहता था।

जून का महीना था। सूरज की गर्मी से ज़मीन तप रही थी। तेज हवा के झोंके धूल के बवंडर उड़ा रहे थे। इस उदासी भरे माहौल को मैं ज्यादा देर बर्दाश्त नहीं कर सका। मैंने एक सँकरी पगडंडी पकड़ी और आगे बढ़ा। पाँच घंटे चलते रहने के बाद भी मुझे कहीं भी पानी नहीं मिला। अब तो मैं पानी की उम्मीद भी खो बैठा था। मेरे चारों तरफ सूखी मिट्टी में उगी कँटीली झाड़ियों के अलावा और कुछ भी न था। इस सन्नाटे में मुझे दूर एक काली परछाई-सी दिखाई दी। मुझे दूर से वह पेड़ जैसा लगा और मैं उस ओर चल पड़ा। पास पहुँचने पर वह एक गडरिया निकला। उसके आसपास पकी मिट्टी में तीस भेड़ें बैठी थीं।

उसके लौकी की तुम्बी में से मुझे पानी पिलाया और कुछ देर बाद वह मुझे अपने घर ले गया। वह एक गहरे प्राकृतिक कुएँ में से पानी खींचता था। इतनी गहराई से पानी खींचने के लिए उसने घिरनियों और रस्सियों की एक जुगाड़ बनाई थी। वह आदमी बहुत कम बोलता था। ऐसा शायद इसलिए था क्योंकि वह एकदम अकेला रहता था और उसके साथ बोलने वाला कोई नहीं था। पर उसके आत्म-विश्वास को देखकर ऐसा लगता था जैसे वह अपने काम में मुस्तैद हो। इस सुनसान बंजर इलाके में मुझे उससे मिलने की कोई उम्मीद न थी। वह बाकायदा एक पक्के मकान में रहता था, जिसे उसने आसपास के पत्थरों से खुद बनाया था।

इस कहानी की शुरूआत दरअसल काफी पुरानी है। आज से कोई अस्सी-बयासी वर्ष पहले जब लेखक फौज में भर्ती हुआ था। साल भर की ट्रेनिंग के बाद उसे पंद्रह दिन की छुट्टी मिली थी। छुट्टी में घर जाने के बजाए उसने घुमक्कड़ी की सोची। अपने फौजी थैले में कुछ खाने का सामान और पानी की बोतल रखकर वह सैर पर निकल पड़ा। जून का महीना था। सूरज की गर्मी से जमीन तप रही थी। तेज हवा धूल के बवंडर उड़ा रही थी। बियाबान के सन्नाटे में उसे दूर एक परछाईसी दिखाई दी...

घर की छत मजबूत थी। छत से हवा टकरा कर साँय-साँय कर रही थी।

घर में सभी चीजें कायदे - करीने से रखी थीं। बर्तन मंझे-धुले थे और फर्श साफ-सुथरा था। एक कोने में धारदार कुल्हाड़ी रखी थी। चूल्हे की धीमी आग पर पतीली चढ़ी थी जिसमें खिचड़ी पक रही थी। उसने इतनी मुस्तैदी से अपने कोट पर पैबन्द लगाया था कि वह नजर ही नहीं आता था। उसने खिचड़ी मुझे भी खिलाई। खाने के बाद मैंने सिगरेट जलाई और एक उसे भी दी। उसने कहा कि वह सिगरेट नहीं पीता। उसका एक झबरीला कुत्ता था। पर वह भी अपने मालिक की तरह चुपचाप रहता था।

पहली मुलाकात के बाद ही मुझे ऐसा लगा जैसे रात को ठहरने की मंजूरी उसने मुझे दे दी हो। क्योंकि अगला गाँव करीब डेढ़ दिन की दूरी पर था, इसलिए यही अच्छा था कि मैं अपने थके पैरों को कुछ सुस्ता लेने दूँ। इस पहाड़ी इलाके में दूर-दराज पर कई छोटी-छोटी बस्तियाँ थीं। बस्तियाँ आपस में कच्ची सड़कों से जुड़ी थीं। इन बस्तियों में रहने वाले लोग लकड़ी से कोयला बनाने का धंधा करते थे। कोयले के धंधे की वजह से आस-पास के सभी पेड़ कट चुके थे। बेरहम हवा को रोकने-टोकने वाला कोई पेड़ नहीं बचा था। टीलों पर हरदम धूल भरी आँधी नाचा करती थी। कोयले के धंधे में कोई ज्यादा फायदा नहीं था। कोयले को गाड़ी से शहर तक ले जाते हुए दो दिन लग जाते थे। बदले में दलाल जो पैसा देते थे उससे मुश्किल से खर्च निकल पाता था। क़र्ज, बीमारी और अनउपजाऊ ज़मीन के कारण कोयलें का धंधा करने वाले परिवार भी तिल-तिल करके मर रहे थे।

खाने के बाद गडरिए ने एक छोटा थैला उठाया और उसके सारे बीज मेज पर उँडेल दिए। फिर बहुत ध्यान से उसकी जाँच-परख करने लगा। वह हौले से एक-एक बीज को उठाता, उसे गौर से देखता और बाद में उनमें से अच्छे बीजों को एक तरफ छाँट कर रख देता। मैंने सोचा कि मैं भी बीज छँटाई के काम में गड़रिए की कुछ मदद करूँ। जिस लगन और एकाग्रता के साथ वह अपना काम कर रहा था उसे देखकर मुझे दखलंदाजी करना उचित नहीं लगा।

खाने के बाद गडरिए ने एक छोटा थैला उठाया और उसके सारे बीज मेज़ पर उँड़ेल दिए। फिर वह बहुत ध्यान से उनकी जाँच -परख करने लगा। वह एक-एक बीज को उठाता, उसे गौर से देखता और बाद में उनमें से अच्छे बीजों को एक तरफ छाँट कर रख देता। मैंने सिगरेट का एक कश खींचा और सोचा कि मैं भी बीज छँटाई के काम में गडरिए की कुछ मदद करूँ। परंतु उसने कहा कि यह काम वह खुद ही करेगा। और जिस लगन और एकाग्रता के साथ वह अपना काम कर रहा था उसे देखकर मुझे अपनी यह दखलंदाजी ठीक भी नहीं लगी। हम लोगों के बीच कुल मिलाकर इतनी थोड़ी ही बातचीत हुई थी। बीजों को छाँटने के बाद वह उसमें से अच्छे बीजों की दस-दस की ढेरी बनाने लगा। ढेरी बनाते वक्त वह बीजों का बहुत बारीकी से मुआयना करता। उनमें से थोड़े भी दागी या चटखे हुए बीजों को वह अलग कर देता। इस तरह से उसने सौ अच्छे बीज छाँटे, उनको एक थैली में भरा और सोने चला गया।

न जाने क्यों इस इंसान के साथ मुझे बड़ी शांति का अहसास हो रहा था। अगले दिन सुबह मैंने उससे पूछा कि क्या मैं उसके यहाँ एक दिन और आराम कर सकता हूँ। उसने सहज ही इसकी इजाजत दे दी। उसके बाद वह दुबारा अपने काम में व्यस्त हो गया। अब आगे और कुछ बातचीत की आवश्यकता भी नहीं थी। पर मेरे अंदर कौतुहल जाग रहा था और मैं उस गडरिए की जीवन-गाथा जानने को उत्सुक था।

सबसे पहले उसने उन छँटे हुए बीजों को एक पानी के बर्तन में भिगो दिया। फिर उसने भेड़ों की बाड़ खोली और उन्हें चारागाह की ओर ले चला। मैंने देखा कि गडरिए के हाथ में लकड़ी की बजाए एक पाँच फुट लंबी लोहे की छड़ थी। छड़ मेरे अँगूठे जितनी मोटी होगी। मैं भी चुपके-चुपके गडरिए के पीछे हो लिया। भेड़ों का चारागाह नीचे

घाटी में था। थोड़ी देर पश्चात वह भेड़ों को अपने झबरीले कुत्ते की देखरेख में छोड़कर वह खुद, धीरे-धीरे पहाड़ी पर मेरी ओर बढ़ा। मुझे लगा कि वह मेरी इस दखलंदाजी पर बौखलाएगा। परंतु उसने ऐसा कुछ नहीं किया। वह अपने रास्ते चला और क्योंकि मेरे पास और कुछ करने को नहीं था इसलिए मैं भी उसके पीछे-पीछे हो लिया। वह लगभग सौ गज की दूरी पर एक टीले पर चढ़ा।

वहाँ पर उसने लोहे की छड़ से मिट्टी को खोद कर एक गड्ढा बनाया। इसमें उसने एक बीज बोया और फिर छेद को मिट्टी से भर दिया। वह देसी पेड़ों के बीज बो रहा था। मैंने उससे पूछा कि क्या वह जमीन उसकी अपनी जायदाद है। उसे यह भी नहीं मालूम था कि वह जमीन किसकी है। शायद वह गाँव की सामूहिक जमीन हो, या. फिर कुछ ऐसे रईसों की जिन्हें इस जमीन की कुछ परवाह ही न हो। ज़मीन का मालिक कौन है यह जानने में उसकी कोई रुचि न थी। उसने उन सौ बीजों को बहुत प्यार और मोहब्बत के साथ बो दिया।

दोपहर के खाने के बाद वह बीज बोने के अपने काम में दुबारा व्यस्त हो गया। मैंने शायद अपना सवाल बार-बार दोहराया होगा, क्योंकि अंत में मुझे उसके बारे में थोड़ी-बहुत जानकारी जरूर मिली। पिछले तीन बरस से वह उस बियाबान इलाके में पेड़ों के बीज बो रहा था। वह अभी तक एक लाख बीज बो चुका था। इन एक लाख बीजों में से केवल

२० हजार ही पौधे निकले थे। उसे लगता था कि इन बीस हजार में से केवल आधे ही जिंदा बचेंगे। आधे या तो किसी प्राकृतिक आपदा का शिकार होंगे या फिर उन्हें चूहे कुतर जाएँगे। पर जहाँ पहले कुछ भी नहीं था वहाँ अब कम-से-कम दस हजार पेड़ तो उग रहे हैं।

यह सब सुनने के बाद मैं उस इंसान की उम्र के बारे में अटकलें लगाने लगा। वह निश्चित रूप से पचास वर्ष से ऊपर का होगा। उसने मुझे खुद बताया कि वह पचपन साल का है। एक समय तराई के निचले क्षेत्र में उसकी खेती-बाड़ी थी। पर अचानक उसके इकलौते लड़के और फिर पत्नी की मृत्यु हो गई। इससे उसको गहरा सदमा पहुँचा। तभी से एकांतवास के लिए वह अपने कुत्ते और भेड़ों के साथ यहाँ चला आया। उसका मानना था कि पेड़ों के बगैर जमीन धीरे-धीरे मर रही है। क्योंकि उसके जिम्मे और कोई जरूरी काम नहीं था इसलिए उसने जमीन की इस खराब हालत को सुधारने की ठानी।

क्योंकि उस समय मैं नौजवान था और सैर-सपाटे के लिए एक वीरान इलाके में निकला था, इसलिए मैं उसका मर्म कुछ समझ पाया। मैं उस समय नादान था और एक अच्छे खुशहाल भविष्य की राह तलाश रहा था। मैंने उससे कहा कि अगले तीस बरसों में उसके लगाए गए यह दस हजार पेड़ घने और सुंदर जंगल का रूप ले लेंगे। उसने मेरे प्रश्न के उत्तर में एक सरल-सा जवाब दिया। उसने कहा कि अगर भगवान ने उसे लंबी उम्र बख्शी तो वह अगले तीस सालों में इतने ज्यादा पेड़ लगाएगा कि यह दस हजार पेड़ तो समुद्र की एक बूँद जितने नजर आएँगे। इसके अलावा वह कुछ फलदार पेड़ों के बीजों के अंकुरण के बारे में भी प्रयोग कर रहा था। इसके लिए उसने अपने घर के बाहर एक पौधशाला बनाई थी। कुछ पौधों को उसने कँटीली तार लगाकर भेड़ों से सुरक्षित रखा था। ये पौधे बहुत अच्छी तरह बढ़ रहे थे। उसने नीचे घाटी में

पिछले तीन बरस से वह उस बियाबान इलाके में पेड़ों के बीज बो रहा था। वह अभी तक एक लाख बीज बो चुका था, जिनमें से केवल बीस हजार ही पौधे निकले थे। उसे लगता था कि इन बीस हजार में से केवल आधे ही जिंदा बचेंगे। आधे या तो किसी प्राकृतिक आपदा के शिकार होंगे या फिर उन्हें चूहे कुतर जाएँगे। पर जहाँ पहले कुछ भी नहीं था वहाँ कम से कम दस हजार पेड़ तो होंगे।

कुछ और किस्म के बीज बोने की योजना बनाई थी। घाटी की जमीन में कुछ गहराई पर मिट्टी में नमी थी। इसी वजह से यह पेड़ वहाँ अच्छी जड़ पकड़ते।

अगले दिन मैं वहाँ से निकल पड़ा।

अगले बरस १९१४ का पहला महायुद्ध शुरू हो गया। मेरी फौज़ की टुकड़ी इस जंग में पाँच साल तक लड़ती रही। एक फौज़ी सिपाही की हैसियत से लड़ाई के दौरान मुझे पेड़ों के बारे में सोचने तक की फुर्सत नहीं मिली। सच बात तो यह थी कि उस घटना का मुझ पर बिलकुल असर नहीं हुआ था। लोगों को अलग-अलग शौक होते हैं- कुछ लोग डाक टिकट इकट्ठा करते हैं तो कुछ लोग विभिन्न देशों के सिक्के। कुछ लोगों को शौकिया तौर पर पेड़ लगाने में भी मज़ा आता होगा। मैं इस घटना को लगभग भूल गया था।

लड़ाई खत्म होने के बाद मुझे एक लंबी छुट्टी मिली और साथ में अच्छी खासी रकम भी मिली। मैंने सोचा क्यों न सैर-सपाटा किया जाए। और इसी उद्देश्य से मैं एक दफा फिर उसी वीरान इलाके में घुमक्कड़ी के लिए निकल पड़ा। उस इलाके की हुलिया में कोई खास बदलाव नहीं आया था। परंतु उस खंडहर हुए गाँव में जब मैं पहुँचा तो मुझे दूर-दराज की पहाड़ियों पर एक धुंध-सी नजर आई। अब जैसे-जैसे मैं उस गडरिए के घर के नजदीक पहुँच रहा था उसकी याद उतनी ही तरोताजा होती जा रही थी। मैं मन में कल्पना कर रहा था कि वह दस हजार पेड़ अब कितने बड़े हो गए होंगे।

मैंने तमाम लोगों को जंग के दौरान मरते देखा था। अगर कोई कहता कि वह गडरिया अब मर चुका है, तो इस बात को मानने में मुझे कोई भी

दिक्कत नहीं होती। भला पचास-साठ का बूढ़ा मरने के अलावा और कर ही क्या सकता है। पर वह गडरिया मरा नहीं था। वह न केवल जिंदा था, पर एकदम भला-चंगा था। उसके काम के तरीके में थोड़ा बदलाव जरूर आया था। उसके पास अब केवल चार भेड़ें थीं परंतु सौ मधुमक्खियों के छत्ते भी थे। उसने अपनी भेड़ों को बेच दिया था। उसे डर था कि कहीं भेड़ें, उसके नए पौधों को खा न जाएँ। मैंने स्पष्ट रूप से देखा कि महायुद्ध से उसके कामकाज में कोई फर्क नहीं पड़ा था। वह उस भीषण लड़ाई से एकदम बेखबर था और लगातार बीज बो रहा था और पेड़ लगा रहा था।

१९१० में लगाए गए पेड़ अब इतने ऊँचे हो गए थे कि उनके सामने हम दोनों बौने से लग रहे थे। हरे, लहलहाते पेड़ों का दृश्य बस देखते ही बनता था। इस असाधारण बदलाव का वर्णन करना भी मेरे लिए संभव नहीं है। सारा दिन, चुप्पी साधे इस हरे-भरे जंगल में घूमते रहे। हरे-भरे पेड़ों की यह वादी अब ग्यारह किलोमीटर लंबी और तीन किलोमीटर चौड़ी हो गई थी। यह सब कुछ एक अशिक्षित गडरिए के दो हाथों की कड़ी मेहनत का फल था। उसकी इंसानियत और दरियादिली देखकर मेरा दिल भर आया। मुझे लगा कि अगर कोई आदमी चाहे तो लड़ाई और तबाही का रास्ता छोड़कर, वह भी भगवान की तरह एक प्यारी और सुंदर दुनिया गढ़ सकता है।

वह दुनिया में हो रही हलचल से एकदम बेखबर अपने सपनों को साकार कर रहा था। हवा में लहलहाते चीड़ के असंख्य पेड़ इस बात के मूक गवाह थे। उसने मुझे कुछ देवदार के पेड़ दिखाए,

जिन्हें उसने पाँच बरस पहले लगाया था। उस समय मैं फ्रंट पर लड़ रहा था। उसने इन पेड़ों की घाटी की तलहटी में लगाया था, जहाँ कि मिट्टी में अधिक नमी थी। इन पेड़ों की जड़ों ने मिट्टी को बाँधे रखा था। उनकी चौड़ी पत्तियाँ छतरियों की तरह धूप को रोक रही थीं। और जमीन को तपने से बचा रही थीं।

इस बंजर जमीन में पेड़ों के लगने से एक नई जान आई थी। परंतु उसके पास यह सब देखने के

वन विभाग का वह मेरा अफसर मित्र एक अच्छा इंसान था और भले काम की इज्जत करता था। हम तीनों ने एक साथ मिलकर खाना खाया। उसके बाद हम कई घंटों तक उस खूबसूरत जंगल को निहारते रहे। मेरे मित्र ने मिट्टी की जाँच कर कुछ खास किस्म के पेड़ लगाने का सुझाव दिया पर बहुत आग्रह नहीं किया, क्योंकि उसकी राय में वह गडरिया पेड़ों के विषय में शायद दुनिया में सबसे अधिक जानता है।

लिए वक्त ही कहाँ था। वह अपने काम में इतना व्यस्त जो था। परंतु वापसी में, मुझे गाँव के पास कुछ झरनों में से पानी की कलकल सुनाई दी। यह झरने न जाने कब से सूखे पड़े थे। पेड़ों के लगने का यह सबसे उत्साहजनक परिणाम था। बहुत साल पहले इन नालों में अवश्य पानी बहता होगा। जिन खंडहर हुए गाँवों का जिक्र मैंने पहले किया था, वह शायद कभी इन नालों के किनारे ही बसे होंगे।

हवा भी बीजों को दूर-दूर फैला रही थी। पानी के दुबारा बहने से नालों के किनारों पर अनेक प्रकार के पौधे और घास उग आई थीं। तरह-तरह के बीज जो मिट्टी की चादर ओढ़े सो रहे थे, अब अपनी नींद से जागे थे। जंगली फूल अपनी रंग-बिरंगी आँखों से आसमान को ताक रहे थे। ऐसा लगता था जैसे जिंदगी जीने में कुछ मतलब हो। पर यह सब बदल इतनी धीमी और प्राकृतिक गति से हुई थी कि उसे मानने में कोई अचरज नहीं लगता था। खरगोश और जंगली सूअर के शिकारियों ने इन पेड़ों के सैलाब को देखा अवश्य था। परंतु उन्होंने उसे पृथ्वी की सनक समझ कर भुला दिया था। तभी तो उसे गडरिए के काम में किसी ने कोई दखल नहीं दी थी। अगर उसे किसी ने देखा होता तो अवश्य उसका विरोध हुआ होता। पर उसे ढूँढ पाना बहुत मुश्किल था। सरकार में या आस-पास के गाँव में, कभी कोई सोच भी नहीं सकता था कि वह विशाल जंगल किसी ने अपने हाथों से लगाया था। इस अनोखे इंसान के व्यक्तित्व का सही अनुमान लगाने के लिए यह याद रखना आवश्यक है कि वह एकदम अकेला था, और एक सुनसान इलाके में अपना काम करता था। उसके एकांत माहौल में इतनी खामोशी थी कि अंत में वह बोलना-चालना भी भूल गया। शायद यह भी संभव है कि उसकी जिंदगी में अब शब्दों की जरूरत भी नहीं रह गई थी।

१९३३ में पहली बार एक फारेस्ट रेंजर भूले - भटके उस तक पहुँचा। रेंजर ने उसे उस आदेश से अवगत कराया जिसमें जंगल के आस-पास किसी तरह की बीड़ी - सिगरेट या आग जलाने पर पाबंदी लगा दी गई थी। ज्वलनशील चीजों से इस सरकारी जंगल को खतरा था। उस रेंजर ने उस जंगल को खुद-ब-खुद उगते देखकर स्वयं भी आश्चर्य प्रकट किया। इस समय वह गडरिया अपने घर से करीब १२ किलोमीटर की दूरी पर कुछ चीड़ के पेड़ लगाने की सोच रहा था। इतनी दूर रोज़ आने-जाने की बजाए उसने उसी स्थान पर अपना घर बनाने की सोची। अगले साल वह नए मकान में चला गया।

१९३५ में उस प्राकृतिक जंगल का मुआयना करने एक बड़ा सरकारी दल भी आया। उसमें वन विभाग के तमाम अफसर शामिल थे। उन्होंने तमाम बेमतलब की बातें कीं। उनकी निरर्थक बातों से और तो कोई लाभ नहीं हुआ, पर इतना अवश्य हुआ कि सारा जंगल 'सुरक्षित-वन-क्षेत्र' घोषित कर

दिया गया। उसका एक फायदा यह हुआ कि लकड़ी से कोयला बनाने के धंधे पर पाबंदी लग गई। इस जंगल की सुंदरता से प्रभावित हुए बिना नहीं रहा जा सकता था। शायद इसी खूबसूरती की वजह से ही सरकारी अस्पतालों का दिल भी पिघल गया था। मुआयने के लिए आए दल में मेरा एक मित्र भी था। जब मैंने उसे जंगल का सही रहस्य बताया
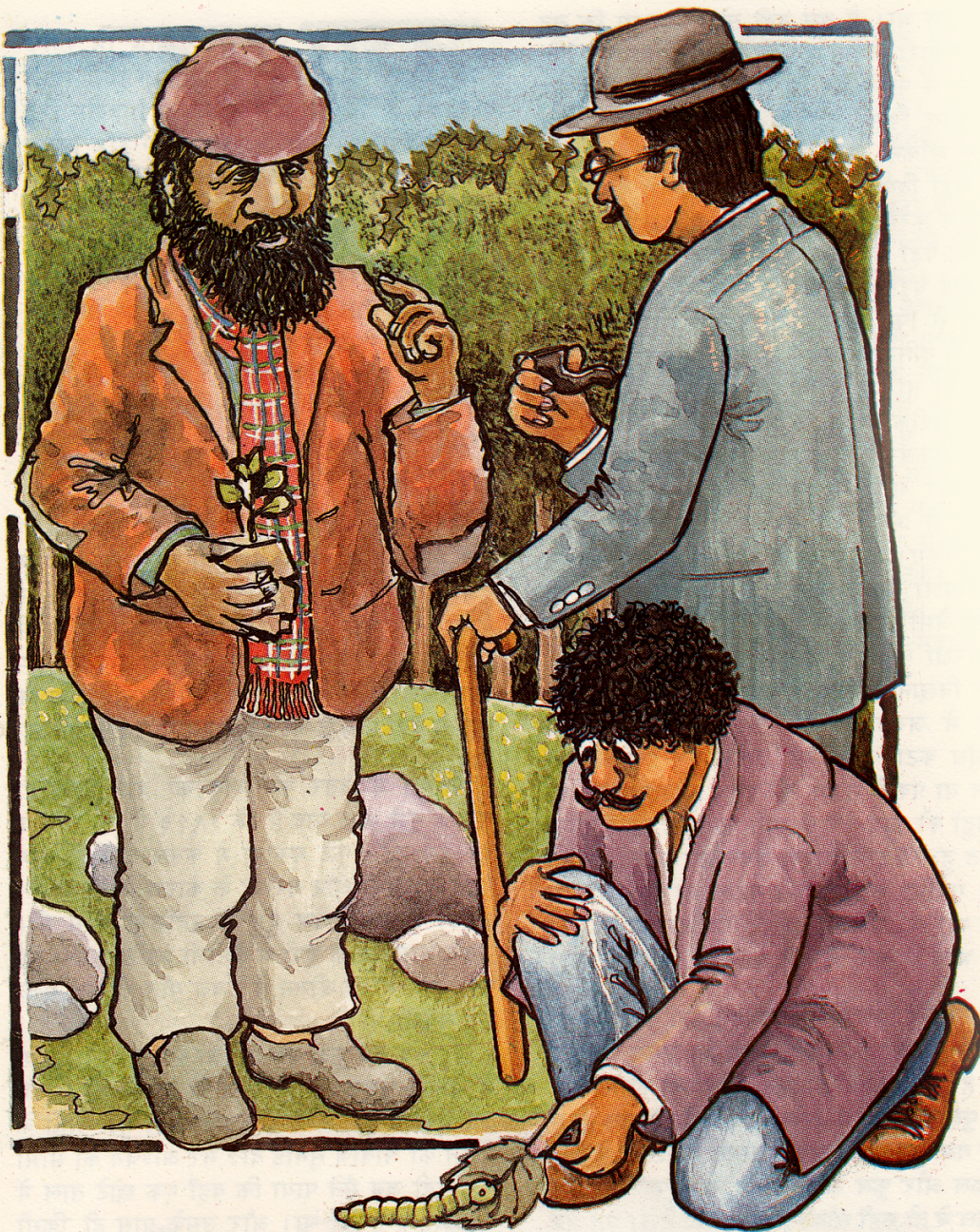
तो वह आश्चर्यचकित रह गया। अगले हफ्ते हम दोनों उस गडरिए के पास गए। वह अपने काम में व्यस्त था। यह जगह मुआयने वाले स्थल से करीब दस किलोमीटर दूरी पर थी।

वह अफसर यूँ ही मेरा दोस्त नहीं बन गया था। वह एक अच्छा इंसान था और भले काम की इज्जत करता था। जो खाना मैं अपने साथ लाया था उसे हम तीनों ने एक साथ मिलकर खाया। उसके बाद हम कई घंटों तक उस खूबसूरत जंगल को निहारते रहे। जिस दिशा से हम आए थे उस पहाड़ी के ढलानों पर लगे पेड़ अब २०-२५ फुट ऊँचे हो चुके थे। मुझे साफ याद है कि १९१३ में यही जमीन एकदम बंजर और बेजान थी। मानसिक शांति, कड़ी मेहनत, पहाड़ों की स्वच्छ हवा और एक सात्विक जीवन ने उस गडरिए को उम्दा सेहत बख्शी थी। इस पृथ्वी पर शायद वह भगवान का

अपना दूत था। मैं बस यही सोच रहा था कि वह कितनी सारी जमीन पर और पेड़ लगाएगा।

जाने से पहले मेरे मित्र ने मिट्टी को जाँच कर कुछ खास किस्म के पेड़ों को लगाने का सुझाव दिया। लेकिन उसने अपने इस सुझाव पर बहुत जोर नहीं दिया। बाद में उसने मुझ से कहा 'मेरे आग्रह न करने के पीछे एक अच्छा कारण है। वह गडरिया पेड़ों के बारे में मुझ से कहीं अधिक जानता है।' कोई घंटा भर चलने के बाद मेरे अफसर दोस्त ने मुझ से फिर कहा, 'वह आदमी शायद पेड़ों के विषय में दुनिया में सबसे अधिक जानता है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि उसने खुश रहने का एक अद्‌भुत तरीका खोज लिया है।'

उस अफसर की बदौलत ही जंगल सुरक्षित रह पाया और साथ में गडरिए का खुशी भी। उस अफसर ने जंगल की सुरक्षा के लिए तीन रेंजर नियुक्त किए। उन पर कड़ा अंकुश रखा गया जिससे वह कोयला बनाने वालों द्वारा दी गई शराब की बोतलों जैसी रिश्वत से मुक्त रहें। १९३९ में अवश्य इस सुरक्षा के काम में कुछ बाधा आई। रेल की लाइन बिछाने के लिए लकड़ी के स्लीपरों की बड़ी मात्रा में जरूरत पड़ी। उसके कारण पेड़ों की अंधाधुँध कटाई शुरू हुई। परंतु यह इलाका रेल स्टेशन या पक्की सड़क की पहुँच से इतना दूर था कि लट्ठों को लाद कर ले जाने का काम बहुत महँगा साबित हुआ। इसी कारण जंगल का कटना बंद हो गया। गडरिए को इस पूरी घटना का कोई आभास भी न था। वह लगभग ३० किलोमीटर की दूरी पर शांत भाव से पेड़ लगाने के काम में व्यस्त था।

गाँव को देखकर ऐसा लगता था जैसे वहाँ के लोगों का एक उज्जवल भविष्य में विश्वास जगा है। उनमें एक नई आशा जगी है। खंडहरों को हटाकर, पाँच घरों की मरम्मत करके उन्हें पुख्ता बनाया गया था। नए घरों को हाल ही में लीपा-पोता गया था। और उनके सामने क्यारियों में हरी सब्जियाँ, फल और फूल उग रहे थे। कहीं पर गेंदे और गुलाब के फूल थे तो कहीं लौकी और सेम की बेल। वह अब ऐसा गाँव बन गया था जहाँ हर किसी के रहने और बसने का दिल करे।

दूसरे महायुद्ध की घमासान लड़ाई से वह एकदम बेखबर था। पहले महायुद्ध को भी उसने इसी तरह नजरंदाज किया था।

जून '४५ में मुझे उस बूढ़े गडरिए से आखिरी बार मिलने का मौका मिला। उस समय उसकी उम्र करीब छियासी वर्ष की होगी। इस बीच वहाँ

क्या यह वही जगह है?

काफी परिवर्तन आया था। उस बियाबान सड़क पर जब मैंने बस को चलते देखा तो मुझे बहुत ताज्जुब हुआ। मैं कई सुपरिचित स्थानों को पहचान भी न पाया। बस मुझे कई नए इलाकों से घुमाती हुई ले गई। जब मैंने एक बोर्ड पर उस पुराने गाँव का नाम लिखा देखा तभी मुझे इस बात का अहसास हुआ कि यह तो वही गाँव है जो एक समय में खंडहर हो गया था।

मैं बस से उतर कर गाँव की ओर पैदल ही चला। मुझे साफ याद है कि १९१३ में उस गाँव के १०-१२ टूटे - फूटे मकानों में केवल तीन ही लोग रहते थे। गर्मी और गरीबी के कारण वे बेहाल थे। उनकी हालत आदम युग के वहशियों जैसी थी। उनके आसपास के घरों में कँटीली झाड़ियाँ उगी हुई थीं। उस निराश जीवन से केवल मौत ही उन्हें मुक्त कर सकती थी।

पर अब सब कुछ बदला हुआ लग रहा था। हवा में अच्छी खुशबू थी। गर्म लू के थपेड़ों की बजाए अब हवा में कुछ नमी थी। एक ओर मुझे पानी के गिरने की आवाज सुनाई दी। मेरे आश्चर्य की सीमा नहीं रही जब मैंने पाया कि वहाँ एक छोटे ताल में फव्वारा चल रहा था। और उसके पास ही किसी ने कनक चम्पा का एक खूबसूरत पेड़ लगा रखा था। पेड़ कोई चार साल पुराना होगा। चम्पा का पेड़ इस बात का प्रतीक था कि इस मृत मरुस्थल में अब दुबारा जीवन लौट आया था।

गाँव को देखकर ऐसा लगता था जैसे वहाँ के लोगों का एक उज्जवल भविष्य में विश्वास जगा है। उनमें एक नई आशा जगी है। खंडहरों को हटा कर पाँच घरों की मरम्मत करके उन्हें पुख्ता बनाया गया था। गाँव में अब २८ लोग रहते थे जिनमें चार

दंपति भी शामिल थे। नए घरों को हाल ही में लीपा-पोता गया था और उनके सामने क्यारियों में हरी सब्जियाँ फल और फूल उग रहे थे। कहीं पर गुलाब और गेंदे के फूल थे तो कहीं पर लौकी और सेम की बेल थी। वह अब ऐसा गाँव बन गया था, जहाँ हरेक किसी के रहने और बसने का दिल करे।

महायुद्ध अभी खत्म नहीं हुआ था और इस कारण जनजीवन अभी भी पूरी तरह सामान्य नहीं हो पाया था। पहाड़ी के निचले ढाल पर मैंने जौ और बाजरे के खेत देखे। सँकरी घाटी में जहाँ नमी अधिक थी वहाँ अब हरियाली उग आई थी। केवल आठ वर्षों में ही यह इलाका हरा-भरा और खुशहाल हो गया था। १९१३ में, मुझे जहाँ खंडहर दिखे थे वहाँ अब हरे-भरे खेत खड़े थे। लोग भी खुश और सुखी दिखाई पड़ते थे। पहाड़ी नाले जो पहले सूख गए थे अब उनमें दुबारा पिघली बर्फ का निर्मल पानी बहने लगा था। इस पानी को नालियों के जरिए अलग-अलग खेतों में ले जाया जा रहा था। खेतों के पास पेड़ों के साएदार झुरमुटे थे। धीरे-धीरे करके पूरा गाँव दोबारा आबाद हो गया था। मैदानी इलाकों में जमीन की कीमत महँगी थी। वहाँ से लोग आकर यहाँ पर बस गए थे। वे अपने साथ नया उत्साह और उमंग लाए थे। सड़कों पर आप ऐसे लोगों को देख सकते थे जिनके चेहरे पर मुस्कुराहट और आँखों में चमक थी। अगर यहाँ की पूरी आबादी को गिना जाए तो इतना जरूर कहा जा सकता है कि इन दस हजार लोगों की खुशहाली का जिम्मेदार वह अनपढ़ गडरिया था।

जब मैं सोचता हूँ कि यह सब खुशहाली एक अकेले आदमी के दिल और हाथों से संपन्न हुई है तो मैं नतमस्तक हो जाता हूँ। एक साधारण से इंसान ने अकेले ही उस बंजर भूमि को आबाद किया था। जब मैं यह सोचता हूँ तो तमाम मुश्किलों के बावजूद, इंसानियत में मेरा विश्वास फिर बुलंद हो जाता है। उस अनपढ़ महान आत्मा के जीवन से मैंने केवल एक ही सबक सीखा है कि अगर इंसान चाहे तो धरती पर रहकर वह भी भगवान जैसा परोपकार कर सकता है। १९४७ में एक पेड़ के नीचे उस गडरिए की आँखें सदा के लिए बंद हो गईं।

किसी आदमी की
इंसानियत का सही अंदाज
लगाने के लिए उसे एक लंबे अर्से तक
जाँचना-परखना जरूरी है। अगर कोई फल की
इच्छा करे बगैर दूसरों की भलाई में लगा हो तो उससे
अच्छा और क्या हो सकता है। यह कहानी जिस
इंसान की है उसने अपनी मेहनत और लगन से
धरती की तस्वीर ही बदल डाली।